2006-2021

16 वर्ष

हल प्रश्न-पत्र

CHRONICLE

Nurturing Talent Since 1990

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा

इतिहास

प्रश्नोत्तर रूप में

सिविल सेवा परीक्षा के पाठ्यक्रम पर आधारित

संघ लोक सेवा आयोग एवं सभी राज्य लोक सेवा आयोग के प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए उपयोगी

पुस्तक के संबंध में

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के नवीनतम पाठ्यक्रम पर आधारित विगत 16 वर्षों (2006-2021) के प्रश्नों का अध्यायवार हल

प्रश्नों को हल करने की प्रकृतिः पुस्तक में प्रश्नों के उत्तर को मॉडल हल के रूप में दिया गया है। प्रश्नों को हल करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि उत्तर सारगर्भित हो, तथा पूछे गए प्रश्नों के अनुरूप हो। पुस्तक में प्रश्नों के इतर भी विशिष्ट जानकारी को उत्तर में समाहित किया गया है, ताकि अभ्यर्थी इसका उपयोग न सिर्फ हल प्रश्न पत्र के रूप में, बल्कि अध्ययन सामग्री के रूप में भी कर सकें।

पुस्तक का उपयोग कैसे करें?: इस पुस्तक का उपयोग अभ्यर्थी अपने उत्तर लेखन शैली में सुधार लाने तथा प्रश्नों की प्रवृति व प्रकृति को समझने के लिये कर सकते हैं। किसी भी परीक्षा के विगत वर्षों के प्रश्न इसमें सबसे लाभदायक होते हैं। पुस्तक में दी गई सामग्री का इस्तेमाल बिंदुवार, निश्चित शब्द सीमा का पालन, उप-शीर्षक एवं आरेख आदि का प्रयोग अभ्यर्थी अपने उत्तर लेखन शैली के अभ्यास हेतु आधुनिक परिपेक्ष में कर सकते हैं। पुस्तक में प्रश्नों के उत्तर उसके सम्बंधित वर्ष के अनुसार ही दिया गया है।

इतिहास-एक वैकल्पिक विषय के रूप में: हाल के वर्षों में सिविल सेवा की परीक्षा हेतु उपलब्ध विभिन्न वैकल्पिक विषयों के पाठ्यक्रमों में अत्यधिक बदलाव हुए हैं एवं इस बदलाव के पश्चात 'इतिहास' विषय की लोकप्रियता एक वैकल्पिक विषय के रूप में बढ़ी है। इस विषय की लोकप्रियता का एक सबसे महत्वपूर्ण कारण इसका साक्ष्य आधारित होना है। एक बार समझ विकसित हो जाने पर इस विषय में रटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। वस्तुतः इतिहास को आज 'कला' में 'विज्ञान' भी कह सकते हैं। यही कारण है कि इस विषय में अच्छे अंकों की संभावना अधिक है। इस विषय की दूसरी विशेषता है सही रणनीति की मदद से न्यूनतम समय में तैयारी, ताकि अच्छे अंक भी हासिल हों और कोई जोखिम भी न रहे। इतिहास विषय का अध्ययन आपके दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है, जिससे आप विभिन्न घटनाक्रमों को प्रेरित करने वाले कारकों को समझ सकने की वैज्ञानिक दृष्टि पाते हैं। यह दृष्टि आपको न सिर्फ सामान्य अध्ययन बल्कि साक्षात्कार में भी अच्छे अंक लाने में सहयोग करता है।

यह पुस्तक छात्रों को संघ लोक सेवा आयोग मुख्य परीक्षा के आलावा राज्य लोक सेवा आयोगों (उत्तर प्रदेश, बिहार, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, एवं झारखण्ड) के बदले हुए पाठ्यक्रम में आयोजित होने वाले सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के इतिहास के प्रश्न पत्र में उपयोगी साबित होगा।

संपादक

अनुक्रमणिका

विषयवार हल प्रश्न-पत्र 2006-2021

प्रथम प्रश्न–पत्र

प्राचीन भारत

- मानचित्र 1
- प्रागैतिहासिक काल 35
- इतिहास लेखन 40
- सिंधु घाटी सभ्यता 48
- आर्य एवं वैदिक काल 54
- बुद्ध काल/महाजनपद काल 60
- धार्मिक आंदोलन 62
- जैन धर्म 63
- बौद्ध धर्म 64
- मगध साम्राज्यवाद 67
- विदेशी आक्रमण 67
- मौर्य साम्राज्य 68
- मौयोत्तर काल 73
- गुप्त काल 81
- स्थापत्य कला 83
- गुप्तोत्तर काल 89
- संगम युग 92
- प्राचीन काल में परिवर्तन (शिक्षा, साहित्य, विज्ञान आदि) 97

मध्यकालीन भारत

- पूर्व मध्यकाल 103
- चोल 106
- पल्लव 110
- राजपूत राज्यों का उदय 111
- राष्ट्रकूट 113
- तुर्की आगमन 114
- दिल्ली सल्तनत 118
- उत्तर भारत के क्षेत्रीय राज्य 138

- विजयनगर साम्राज्य 141
- बहमनी साम्राज्य 146
- सूफी आंदोलन 147
- भक्ति आंदोलन 151
- मुगल साम्राज्य 153
- मराठा 183
- सिख 186

द्वितीय प्रश्न-पत्र

आधुनिक भारत

- भारत में अंग्रेजी शासन की स्थापना 189
- औपनिवेशिक 201
- औपनिवेशिक शासन का विरोध 216
- औपनिवेशिक काल में सामाजिक स्थिति 224
- आर्थिक नीतियां 233
- भारतीय राष्ट्रवाद का आरम्भिक चरण 237
- दो महायुद्धों के बीच भारत की अर्थव्यवस्था 249
- गांधीजी के नेतृत्व में राष्ट्रवाद 251
- सांप्रदायिकता का विकास 256
- साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विकास 256
- स्वतंत्रता की ओर 258
- स्वतंत्रोत्तर भारत 268

विश्व इतिहास

- पुनर्जागरण, धर्मसुधार आंदोलन तथा प्रबोधन 281
- आधुनिक राजनीति का उदय 291
- औद्योगिक क्रांति 301
- राष्ट्र राज्य प्रणाली (एकीकरण) 308
- साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद 315
- क्रांतियां तथा प्रतिक्रांतियां, 19वीं शताब्दी में यूरोपीय क्रांतियां 327
- शीतयुद्ध 344
- उपनिवेश एवं उनकी स्वतंत्रता 350
- उपनिवेशवाद का अंत तथा अविकासीकरण 355
- सोवियत संघ का विघटन एवं ध्रुवीय विश्व 366
- यूरोपीय संघ 371
- गुटनिरपेक्ष 373
- संयुक्त राष्ट्र संघ 376

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
(प्रथम प्रश्न-पत्र)

प्राचीन भारत

खंड-क

मानचित्र

प्रश्न. आपको दिए गए मानचित्र पर अंकित निम्नलिखित स्थानों की पहचान कीजिए एवं अपनी प्रश्न-सह-उत्तर पुस्तिका में उनमें से प्रत्येक पर लगभग 30 शब्दों की संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। मानचित्र पर अंकित प्रत्येक स्थान के लिए स्थान-निर्धारण संकेत क्रमानुसार नीचे दिए गए हैं:

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2021)

1. पुरापाषाणकालीन स्थल
2. मध्यपाषाणकालीन स्थल
3. नवपाषाणकालीन स्थल
4. नवपाषाणकालीन-ताम्राश्मयुगीन स्थल
5. हड़प्पाकालीन स्थल
6. आद्य-ऐतिहासिक एवं ऐतिहासिक स्थल
7. अभिलेखीय स्थल
8. जैन विहार स्थल
9. सिक्कों का जखीरा
10. पुरापाषाणकालीन स्थल
11. मृण्मूर्तिकला स्थल
12. शैल्यकृत गुफाएं
13. प्राचीन विद्या केन्द्र
14. राजनैतिक एवं सांस्कृतिक केंद्र
15. बौद्ध स्थल
16. प्राचीन बन्दरगाह
17. प्रारंभिक ऐतिहासिक स्थल
18. हाथीदांत का जखीरा
19. बौद्ध संघाराम केंद्र
20. मंदिर संकुल

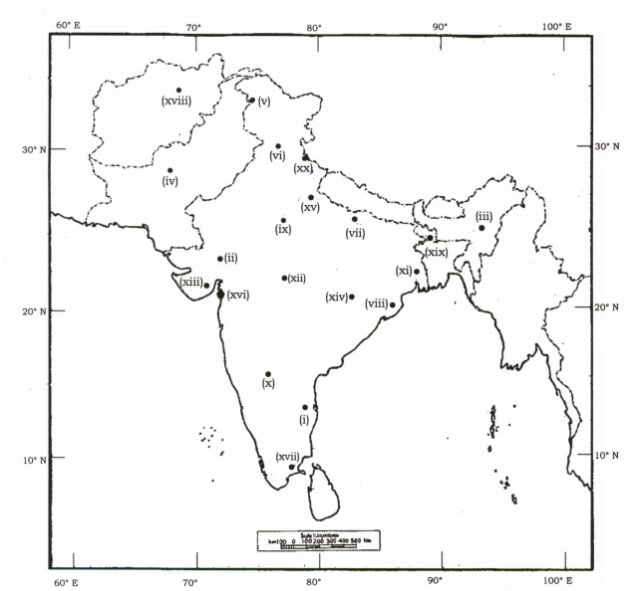

उत्तर:

1. **पुरापाषाण स्थल-(अत्तिरामपक्कम):** यह चेन्नई में स्थित है। यह निम्न, मध्य और ऊपरी पुरापाषाणकालीन संस्कृतियों के अनुक्रम को प्रदर्शित करता है।
   - ❖ यह दक्षिण एशिया के सबसे पुराने प्रागैतिहासिक स्थलों में से एक। यहाँ से हैंडैक्स, क्वार्टजाइट पत्थरों से बने औजार प्राप्त हुए हैं।
   - ❖ इन औजारों का उपयोग लकड़ी काटने के लिए किया जाता था। यहाँ से जानवरों के पैरों के निशान मिले हैं।जिसमें घोड़े, भैंस और नीलगाय जैसे जानवरों के जीवाश्म , दांत, और अन्य साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।
2. **मध्यपाषाण स्थल (लंघनाजी):** यह गुजरात के मेहसाणा जिले में स्थित है। यहाँ से मानव अंत्येष्टि, जंगली जानवरों की हड्डियाँ, और कुछ बर्तन प्राप्त हुए हैं। यहाँ से माथे पर कटे के निशान वाले 14 मानव कंकाल मिले हैं।
3. **नवपाषाण स्थल-(दाओजली हैडिंग):** यह असम प्रांत के कछार पर्वत के उत्तरी क्षेत्र में स्थित एक ऐतिहासिक स्थान है। दओजली हैडिंग का स्थानीय भाषा में अर्थ पक्षियों का पर्वत होता है। यह स्थल बलुए व शैली प्रस्तर निर्मित एक छोटे पर्वत पर स्थित है।
   - ❖ यहाँ से पत्थर और जीवाश्म लकड़ी की कुल्हाड़ी, एडजेस, छेनी, कुदाल, पीसने वाली स्लैब, क्वार्न और मुलर प्राप्त हुआ है।
   - ❖ दाओजी हेडिंग से खरल और मूसल जैसे पत्थरों के उपकरण मिलें हैं। जिसके बाद अंदाजा लगाया जाता है कि यहां के लोग भोजन के लिए अनाज उगाते थे। इसके अलावा इस स्थान से जेडाइट नाम ला पत्थर भी मिले हैं। ऐसा माना जाता है कि यह पत्थर चीन से आया था।

- यहाँ से पॉलिश किए गए पत्थर के औजार, चीनी मिट्टी की बर्तन और रसोई के सामान प्राप्त हुआ है।

4. **नवपाषाण-कालीन स्थल-(मेहरगढ़):** यह, पाकिस्तान के बलूचिस्तान में स्थित है। यह एक नवपाषाण और कैल्सोलिथिक स्थल है।
- यहाँ से एक छोटी जोत वाले खेती ,पशुचारण और नियोजित प्राचीन कृषि गाँव,मिट्टी की ईंट का घर ,हड्डी से बने औजार के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।
- यहाँ से धातु विज्ञान के साक्ष्य के साथ सबसे शुरुआती प्रमाण प्राप्त हुए हैं। कपास की आरंभिक खेती और मछली पकड़ने के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं। यहाँ से टेराकोटा की मूर्तियाँ भी मिलीं हैं।

5. **हड़प्पा स्थल-(मांडा):** जम्मू से करीब 28 किमी उत्तर-पश्चिम में सिंधु नदी की एक सहायक नदी चिनाब के दाहिने तट पर पीरपंजाल पर्वत श्रृंखला की तराई में स्थित मांडा हड़प्पाकालीन सभ्यता का सबसे उत्तरी स्थल है।
- मांडा 18वीं सदी के खंडहरों में स्थित इस स्थल से विकसित हड़प्पा संस्कृति के लोगों के पूर्व हड़प्पाकालीन लोगों के साथ रहने के प्रमाण मिले हैं।
- उत्खनन से पूर्व हड़प्पा से कुषाण काल तक की संस्कृतियों के तीन स्तरीय अनुक्रम प्रकाश में आए हैं।
- यहाँ से प्राप्त हड़प्पाकालीन वस्तुओं में दोहरने सर्पिल-सिरे वाली ताम्र पिन या कील (125.4 सेमी) से समझा जाता है कि इसका पश्चिम एशिया से संबंध था। हड्डियों के वाणाग्र आधार सहित, चूडियाँ, पक्की मिट्टी की भट्टियाँ, हड़प्पाकालीन चित्रकारी वाले बर्तनों के टुकड़े, श्रृंग पत्थर (बिल्लौर), ब्लेड, एक अर्द्धनिर्मित मुहर, कुछ चक्कियाँ एवं मूसल शामिल हैं।

6. **प्रोटो-ऐतिहासिक स्थल-(रोपड़ो):** पंजाब प्रदेश के श्रोपड़ जिलेश में सतलुज नदी के बांए तट पर स्थित है। यहाँ स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सर्वप्रथम उत्खनन किया गया था।
- इसका आधुनिक नाम 'रूप नगर' था। 1950 में इसकी खोज '-बी.बी.लाल' ने की थी। यहाँ संस्कृति के पांच चरण मिलते हैं जो इस प्रकार है-हड़प्पा चित्रित धूसर मृदभांड, उत्तरी काले पालिश वाले मृदभांड, कुषाण, गुप्त और मध्यकालीन मृदभांड।
- यहाँ से हड़प्पा पूर्व एवं हड़प्पाकालीन संस्कृतियों के अवशेष मिले हैं। इस स्थल की खुदाई 1953-56 में 'यज्ञ दत्त शर्मा' के द्वारा की गई थी। यहाँ प्राप्त मिट्टी के बर्तन, आभूषण चर्ट, फलग एवं तांबे की कुल्हाड़ी महत्त्वपूर्ण है। यहाँ पर मिले मकानों के अवशेषों से लगता है कि यहाँ के मकान पत्थर एवं मिट्टी से बनाये गये थे।
- यहाँ शवों को अण्डाकार गढ्ढों में दफनाया जाता था। एक स्थान से शवाधान के लिए प्रयोग होने वाले ईटों का एक छोटा कमरा भी मिला है। कुछ शवाधान से मिट्टी के पकाए गए आभूषण, शंख की चूड़ियां, गोमेद पत्थर के मनके, तांबे की अंगूठियां आदि प्राप्त हुई हैं।

7. **शिलालेख साइट-(सोहागौरा):** सोहगौरा गाँव प्रागैतिहासिक सभ्यता का महत्वपूर्ण स्थल है। ऐसा माना जाता है कि मानव सभ्यता ने जब खेती करना आरम्भ किया तो, पहले पहल जिन क्षेत्रों में खेती के प्रमाण मिले उनमें से एक गाँव सोहगौरा भी है।
- 1974 की खुदाई में मिले मृदभाण्डों से स्पष्ट हुआ कि मृदभाण्डों को मजबूती देने के लिए मिट्टी में धान की भूसी मिलाई गई है। यही से इस धारणा को बल मिला कि धान की खेती के पहले प्रमाण विन्ध्य क्षेत्र के इस इलाके से ही मिले।
- इस प्रकार गाँव सोहगौरा इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण प्रागैतिहासिक कालीन स्थल सिद्ध हो सकता है। बताया जाता है कि खुदाई के दौरान जो मृदभाण्ड और औंजार मिले थें वे 8000 ई.पू. के हैं।

8. **जैन मठ स्थल-उदयगिरि-(खंडगिरि):** भुवनेश्वर, ओडिशा के पास जुड़वां पहाड़ियाँ उदयगिरि और खंडगिरि स्थित है। दोनों पहाड़ियों पर चट्टानों को काटकर 33 गुफाएं बनाई गई हैं।
- ये ज्यादातर एक मंजिला हैं, लेकिन कुछ दो मंजिला गुफाएं भी हैं। यह जैन मुनियों के निवास स्थान था। गुफाओं की खुदाई राजा खारवेल और उनके उत्तराधिकारियों ने की थी। रानीगुम्फा गुफाएं-दो मंजिला और सबसे बड़ी।
- राजा खारवेल (दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व) का हाथीगुम्फा शिलालेख (17 पंक्ति) को प्राकृत में एक ब्राह्मी लिपि में उकेरा गया है। यह जैन धर्म में छवि पूजा का सबसे पहला अभिलेखीय संदर्भ है।

9. **मुगलकालीन स्थल-(बयाना):** बयाना (BAYANA) भारत के राजस्थान राज्य के भरतपुर जिले में स्थित एक नगर है।बयाना को 'वाणासुर की नगरी' के नाम से भी जाना जाता है।
- बयाना मुगल कल में भी एक प्रसिद्ध शहर हुआ करता था। यदुवंशी राजपूतों द्वारा निर्मित बयाना का किला आज भी एक अनूठा किला माना जाता है। चित्तौड़गढ़ का दुर्ग बनने से पहले यह किला एशिया के सबसे बड़े किलों में से था।
- बयाना में मुस्लिम समुदाय भी अच्छी संख्या में रहता है, मुस्लिम समुदाय के बुजुर्ग लोगों का तो यहाँ तक मानना है कि जब मुसलमानों का तीर्थ चुना जाना था तब मक्का और बयाना में सिर्फ ढाई कब्र का अंतर था। यदि ऐसा हुआ होता तो आज मक्का मदीना की जगह बयाना में मुस्लिम तीर्थ होता।
- यहाँ की मस्जिद उषा मस्जिद भी काफी प्रसिद्ध मानी जाती है। यहाँ की भीतरबाड़ी स्थित उषा मंदिर भी बहुत प्रसिद्ध मंदिर है जहाँ से बयाना के इतिहास में मौजूद होने के शाक्ष्य प्राप्त होते हैं।

10. **पुरापाषाण स्थल-(हुन्सगि):** यह कर्नाटक के यादगीर जिले में स्थित है। यहाँ से पुरापाषाण काल के औजार मिले। इसमें पत्थर के औजार और केलाइमस्टोन, बलुआ पत्थर, क्वार्टजाइट, डोलराइट और चर्ट से बने हथियार थे।
- पाए गए औजारों में नुकीले किनारों वाले ब्लेड और कई बहुउद्देशीय उपकरण शामिल हैं। पत्थर का कार्य स्थल जहाँ स्थानीय कच्चे माल के औजार बनाकर अन्य स्थानों पर भेजे जाते थे। फूस की छत जैसी संरचनाओं के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।

11. **टेराकोटा स्थल-(चंद्रकेतुगढ़):** यह एक पुरातात्विक स्थल है जो पश्चिम बंगाल के उत्तर 24 परगना जिले में स्थित है। यहाँ से चांदी और तांबे के पंच अंकित सिक्के मिले हैं।
- यहाँ से जहाज की आकृति वाले कुछ पंच चिह्न वाले सिक्कों से संकेत मिलतें हैं। संभवत: चंद्रकेतुगढ़ एक बंदरगाह शहर रहा होगा। पत्थर और टेराकोटा मोती, अर्ध-कीमती पत्थर के मोती और हाथीदांत और हड्डी की वस्तुएं यहाँ से प्राप्त हुए हैं।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
(प्रथम प्रश्न-पत्र)

मध्यकालीन भारत

खंड-ख

पूर्व मध्यकाल

प्रश्नः मध्यकालीन दक्कन ग्राम प्रशासन और अर्थव्यवस्था का वर्णन कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2020)

प्रश्न की मांग: मध्यकालीन दक्कन में ग्राम प्रशासन और अर्थव्यवस्था के बारे में विस्तार से जानकारी देनी है।

उत्तर: मध्यकालीन दक्कन में प्रशासन वलानाडू, नाडू, उर और ग्राम के रूप में विभाजित थे। हालांकि इस काल में दक्कन क्षेत्र भी अनेक छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित था, परंतु ग्रामीण प्रशासन में बहुत ज्यादा अंतर नहीं आया था। इस दौरान केंद्रीय और स्थानीय स्तरों पर अधिकारी गण मौजूद थे। मुवेंद्र बेलान जैसी उपाधियों को धारण करने वाले उच्च अधिकारी थे जबकि अधिनस्थ अधिकारी सिरूतारम थे। राजा की सरकार का मंडलामुदाली नाडू बगाप और मध्यस्थ जैसे स्थानीय अधिकारियों के माध्यम से स्थानीय स्तर पर होने का आभाष मिलता है। ये अधिकारी राजा और स्थानीय जनता के बीच महत्वपूर्ण कड़ी का काम करते थे। उत्तर भारत की तरह छोटे स्तर पर यहां भी सामंती व्यवस्था के संकेत मिलते हैं।

प्रशासन

दक्कन के क्षेत्र में प्रांतीय स्तर पर नायक अर्थात सफल सैनिक अधिकारियों को नियुक्त किया जाता था जो कि छोटे स्तर पर सामंतों पर नियंत्रण रखने, भूराजस्व वसूलने और कानून व्यवस्था बनाए रखने का कार्य करते थे। बड़े गांवों की आय सेना के रख-रखाव के लिए अलग रखी जाती थी। काकातीय राजा नायकों की बढ़ती शक्ति के प्रति हमेशा सशंकित रहते थे। वे नयकों को अधिक समय तक एक स्थान पर नहीं रहने देते थे ताकि वे स्थानीय स्तर पर अधिक शक्तिशाली न हो सकें। विजयनगर की नायंकर व्यवस्था की शुरुआत इसी समय मानी जाती है।

गांवों की प्रशासनिक व्यवस्था का उत्तरदायित्व एक ग्राम प्रमुख के नेतृत्व में ग्राम पंचायत पर था। गांवों के समूह भी एक प्रशासनिक इकाई में संघठित किए जाते थे। काकातीय राज्य में इन्हें स्थल कहते थे और स्थल के समूह को नाडू कहा जाता था। विभिन्न राज्यों में प्रशासनिक इकाईयां और इनके प्रमुख भिन्न नामों से जाने जाते थे।

ब्रह्मदेय व्यवस्था इस काल में भी जारी रही और प्रशासन एवं अर्थव्यवस्था में मंदिरों की भूमिका अहम बनी रही।

अर्थव्यवस्था

इस काल में कृषि उत्पादों से प्राप्त कर राज्य की आय का मुख्य साधन था। राज्य द्वारा लगातार अधिक से अधिक भूमि को कृषि के अधीन लाने का प्रयास किया जाता था। सिंचाई के लिए तालाब और बांध बनाए जाते थे।

दौलताबाद में दिल्ली सल्तनत का नियंत्रण स्थापित हो जाने से भूराजस्व व्यवस्था में नया परिवर्तन आया। चरागाहों, खानों और जंगलों पर राज्य का स्वामित्व था और राज्य इनसे कर वसूल करता था। चूंगी से आय और व्यापार से प्राप्त कर राज्य की आय के अन्य साधन थे। अरब व्यापारियों के आगमन के बाद दक्कन में व्यापारिक गतिविधियों में तेजी आई। इसमें व्यापारी संघ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

निष्कर्ष

इस प्रकार दक्कन के क्षेत्र में छोटे छोटे राज्यों के अस्तित्व में होने के बावजूद ग्रामीण प्रशासन और अर्थव्यवस्था में बहुत प्रभाव नहीं पड़ा। जबकि विदेशी व्यापारियों के जुड़ाव से अर्थव्यवस्था में गतिशीलता अवश्य आई।

प्रश्नः पूर्व मध्यकालीन भारत के अस्थायी स्वरूप के संघटकों को स्पष्ट कीजिए। (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2016)

उत्तर: प्रारंभिक मध्यकाल में अस्थायी स्वरूप के कई संघटक देखने को मिलते हैं। यही संघटक मध्यकाल को प्राचीन भारत से पृथक करते हैं। प्रारंभिक मध्यकाल के इस अस्थायी स्वरूप को हम सबसे पहले राजनीति के क्षेत्र में देखने का प्रयास करेंगे। यह समय भारतीय इतिहास का सबसे ज्यादा संक्रमण का काल था।

राजनीति के क्षेत्र में सामंतवादी व्यवस्था अपने चरम रूप में स्थापित हो चुकी थी। सामंतवादी व्यवस्था के तहत राजनीति के विकेंद्रीकरण की शुरूआत हुई और कई राज्यों का उदय हुआ। इस राजनीति व्यवस्था का एक नकारात्मक परिणाम यह हुआ कि उत्तर भारत में कभी राजनीतिक एकता स्थापित नहीं हो सकी जिसका फायदा तुर्कों को मिला और सल्तनत की स्थापना में वे सफल रहे।

इस अस्थाई संघटक का प्रभाव धर्म के क्षेत्र पर भी देखने को मिला। प्रारंभिक मध्यकाल में धर्म के क्षेत्र में भी परिवर्तन देखने को मिला है। ब्राह्मण मत में भक्ति पर विशेष बल दिया जाने लगा। इसके परिणामस्वरूप अवतारवाद की महिमा बढ़ गई। कबीलाई अनुष्ठानों की स्थापना, मंदिर तथा ईश्वरवाद को राजकीय संरक्षण प्राप्त हुआ। दक्षिण भारत की ओर भक्ति का प्रसार हुआ जिससे दक्षिण में भक्ति आंदोलन की शुरूआत हुई। भक्ति आंदोलन में प्रतिरोध सुधार पर बल और आंदोलन के बाद रूपांतरण। प्रारंभिक मध्यकाल धर्म की सबसे बड़ी विशेषता है तंत्रवाद की उत्पत्ति।

समाज के क्षेत्र में देखें तो प्रारंभिक मध्यकाल में विभिन्न जातियों का विकास देखने को मिलता है। वर्ण संकरों का उदय, कायस्थ नामक जाति का विकास, अछुतों का उदय एवं विकास। वैश्यों की सामाजिक स्थिति में गिरावट तथा शुद्रों की सामाजिक स्तर में बढ़ोतरी। वर्ण पदानुक्रम के विचार का प्रसार अब पूर्वी भारत, दक्कन तथा दक्षिण भारत में हुआ। महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई।

आर्थिक क्षेत्र में भी कई परिवर्तन हुए। बंद अर्थव्यवस्था की शुरूआत, जिसे स्वनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी कहते हैं इसमें उत्पादन स्थानीय जरूरतों को ध्यान में रखकर किया जाता है। बंद अर्थव्यवस्था के मूल में भूमि अनुदान की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बंद अर्थव्यवस्था के कई नकारात्मक प्रभाव व्यापार-वाणिज्य पर पड़ा। नगरों का ह्रास होने लगा तथा ग्रामीणीकरण को बढ़ावा मिलने लगा। सिक्कों की स्थिति में भी गिरावट के संकेत मिलते हैं।

प्रारंभिक मध्यकाल में सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इस दौर में कृषि का विकास एवं प्रसार हुआ। बढ़ते भूमि अनुदान के फलस्वरूप अनुदान ग्रहिता ने अपने अनुदित भूमि पर कृषि को बढ़ावा देने का कार्य किया।

इन्होंने सिंचाई सुविधा को विकसित करने का कार्य किया। इसके साथ-साथ कृषि संबंधी ज्ञान को भी प्रचारित एवं प्रसारित करने का कार्य किया। इस ज्ञान के प्रसार से जनजाति क्षेत्रों में भी कृषि को बढ़ावा मिला। कृषि ज्ञान तथा तकनीक का विकास हुआ।

इस भूमि अनुदान से कृषि संबंधों में भी नवीन तत्व देखने को मिलते हैं। इस व्यवस्था के तहत दानग्रहीता को सभी अधिकार दे दिए गए। इससे किसानों पर आर्थिक बोझ बढ़ा। उन पर विभिन्न प्रकार के कर जैसे- हिरण्य, उद्रंग, हलिका, भाग, भोग आदि लगाए गए। किसान मजदूर में परिवर्तित होने लगे। इस प्रकार हम पूर्व मध्यकाल के अस्थायी स्वरूप के संघटकों को देख सकते हैं।

प्रश्नः वित्तीय संस्थानों के रूप में दक्षिण भारतीय मंदिरों का पूर्व मध्यकालीन सामाजिक संस्थाओं पर किस प्रकार गहरा प्रभाव पड़ा? समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2016)

उत्तरः भारतीय इतिहास में मंदिरों का स्थान काफी महत्वपूर्ण रहा। मंदिरों ने स्थापत्य कला के साथ भारत की राजनीतिक, आर्थिक, एवं सामाजिक व्यवस्था में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मंदिरों की इस प्रकार की बहुमुखी भूमिका उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में काफी महत्वपूर्ण रही है। दक्षिण भारत की राजनीति में मंदिरों का अपना एक अलग स्थान रहा है।

दक्षिण भारत की राजनीति उत्तर भारत से बिल्कुल पृथक थी क्योंकि दक्षिण भारत में जनजातियों का आर्यीकरण बहुत बाद में प्रारंभ हुआ। दूसरी तरफ नाडु तथा वलनाडु जैसे स्थानिक संगठन थे जिसको तोड़े बिना एक केंद्रीकृत राज्य की स्थापना संभव नहीं थी। मंदिर आर्थिक संसाधन के भी स्रोत थे क्योंकि मंदिर बहुत बड़े स्तर पर धन के रूप में चढ़ावा ग्रहण करते थे। मंदिरों की आर्थिक भूमिका काफी महत्वपूर्ण थी। मंदिर बैंक के रूप में कार्य करते थे। वे लोगों को ब्याज पर धन प्रदान करते थे। इससे व्यापारिक क्रिया-कलाप में वृद्धि हुई। इसके साथ-साथ मंदिरों के निजी कार्य हेतु शिल्प एवं कारीगर को भी नियुक्त किया जाता था जिससे हस्तशिल्प का भी पर्याप्त विकास हुआ। मंदिरों की इस आर्थिक संपन्नता एवं धन का उपयोग दक्षिण भारत के राजा ने अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए किया।

मंदिरों की वित्तीय भूमिका के साथ-साथ इसकी सामाजिक भूमिका भी महत्वपूर्ण थी। मंदिरों का प्रभाव दक्षिण भारत के समाज पर काफी गहरा था क्योंकि दक्षिण भारत में धीरे-धीरे ब्राह्मणवादी व्यवस्था स्थापित हो चुकी थी। ये मंदिर दक्षिण भारत में क्षेत्रिय संप्रभुता के लिए संपर्क सूत्र का कार्य करने लगी। ये मंदिर आम जनता के निजी मामलों में भी दखल देने लगे। इससे जनता के संपूर्ण जीवन पर मंदिर का प्रभाव देखने को मिलने लगा। मंदिर व्यवस्था ने ही राजा को स्थानीय मामलों में हस्तक्षेप करने का आधार प्रदान किया। इस प्रकार मंदिरों के माध्यम से राजा जनता के आपसी झगड़े, उनके रीति-रिवाज, परंपरा आदि को भी प्रभावित करने लगे। ब्राह्मणवादी व्यवस्था के अंतर्गत आनुष्ठानिक पद व्यवस्था के माध्यम से मंदिर का प्रशासन सभा, उड़ तथा नगरम् के माध्यम से होता है। यह सभी संस्थाएं स्थानीय प्रशासन की सबसे महत्वपूर्ण इकाई थी और यह सभी इकाई सीधे आम जनता से संबंधित थी। मंदिरों ने संसाधन के वितरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मंदिर के माध्यम से राजा ने नाडु जो नातेदारी पर आधारित एक सामाजिक संगठन था को तोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और राजा की शक्ति में वृद्धि की। दक्षिण भारत में मंदिर ने वर्णव्यवस्था एवं जातिव्यवस्था को भी स्थापित करने का कार्य किया एवं उसको एक आधार भी प्रदान किया। इसके अतिरिक्त मंदिर दक्षिण भारत में शिक्षा व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उस समय कांची एक महत्वपूर्ण शिक्षा का केंद्र था। हालांकि इस शिक्षा व्यवस्था पर ब्राह्मणवादी व्यवस्था का प्रभाव अधिक था। यह शिक्षा समाज के उच्च वर्ग तक ही सीमित थी। इस मंदिर व्यवस्था ने स्त्रियों की स्थिति को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया। मंदिरों से ही दक्षिण भारत में देवदासी प्रथा का विकास प्रारंभ हुआ जिसने स्त्रियों की परतंत्रता को बढ़ावा दिया। इस प्रकार हम पूर्व मध्यकालीन दक्षिण भारत में मंदिर का प्रभाव वित्तीय संस्थाओं के साथ-साथ सामाजिक संस्थाओं पर भी देख सकते हैं।

प्रश्नः वर्ष 750-1200 ई. के मध्य कृषि अर्थव्यवस्था की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए? (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2014)

उत्तरः प्रारंभिक मध्यकालीन अर्थव्यवस्था में कृषि एक प्रधान विषय था। भूमि-अनुदान के माध्यम से कृषिगत क्षेत्रीय विस्तार की जो शुरुआत सातवाहन एवं गुप्त काल में हुई थी वह इस काल में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच चुका था। चूंकि दानकर्ताओं को वित्तीय एवं प्रशासनिक अधिकार भी दिए गए थे, इसलिए कृषि के विकास को बढ़ावा मिला।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

आधुनिक भारत

खंड-क

भारत में अंग्रेजी शासन की स्थापना

प्रश्नः ईस्ट इंडिया कंपनी का मानना था कि मीर कासिम के रूप में उन्हें एक आदर्श कठपुतली मिल गई है। हालांकि मीर कासिम कंपनी की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरा। समालोचनात्मक विवेचना कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2021)

उत्तरः बंगाल के नवाब मीर कासिम ने अपने ससुर मीर जाफर की जगह ली और 1760 से 1763 तक 3 साल की अवधि के लिए शासन किया। ब्रिटिश साम्राज्य ने शुरू में मीर जाफर का समर्थन किया क्योंकि उसने प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों की सहायता की थी। लेकिन जब मीर जफर डचो के साथ मिलकर अंग्रेजों के खिलाफ योजना बनाने लगा तो अंग्रेजों ने उसे हटकर मीर कासिम को बंगाल का नवाब बनाया।

- मीर कासिम का शासनकाल गद्दी पर बैठने पर मीर कासिम ने अंग्रेजों को भव्य उपहारों को दिया। अंग्रेजों को खुश करने के लिए उसने लोगों को लूटा, जमीनों को जब्त किया और शाही खजाने को कम कर दिया जो कभी मीर जाफर द्वारा बनाया गया था। हालाँकि जल्द ही मीर कासिम ब्रिटिश हस्तक्षेप से थक गया और मीर जाफर की तरह ब्रिटिश को हारने के बारे में सोचने लगा।
- उन्होंने अपनी राजधानी को मुर्शिदाबाद से वर्तमान बिहार में मुंगेर में स्थानांतरित कर दिया, जहां उन्होंने स्वतंत्र सेना की स्थापना की, कर संग्रह को सुव्यवस्थित करके उन्हें वित्तपोषित किया। उसने अंगर्जों के कर मुक्त व्यापार का विरोध किया। अंग्रेजों द्वारा इन करों का भुगतान करने से इनकार करने से निराश मीर कासिम ने स्थानीय व्यापारियों पर भी कर समाप्त कर दिया। इससे ब्रिटिश व्यापारियों को अब तक जो लाभ मिल रहा था, वह खत्म हो गया और शत्रुता बढ़ गई।
- मीर कासिम ने 1763 में पटना में कंपनी के कार्यालयों पर कब्जा कर लिया, जिसमें रेजिडेंट सहित कई यूरोपीय मारे गए। मीर कासिम ने अवध के शुजाउद्दौला और यात्रा करने वाले मुगल सम्राट शाह आलम द्वितीय के साथ गठबंधन किया, जिसेअंग्रेजों ने भी धमकी दी थी। हालाँकि उनकी संयुक्त सेना 1764 में बक्सर की लड़ाई में हार गई थी। मीर कासिम ने नेपाल के राजा पृथ्वी नारायण शाह के शासनकाल के दौरान भी नेपाल पर हमला किया था।
- वह बुरी तरह से हार गया था क्योंकि नेपाली सैनिकों के पास इलाके, जलवायु और अच्छे नेतृत्व सहित कई फायदे थे। मीर कासिम का छोटा अभियान ब्रिटिश शासन के खिलाफ सीधी लड़ाई के रूप में महत्वपूर्ण था। उससे पहले सिराजुद्दौला के विपरीत मीर कासिम एक प्रभावी और लोकप्रिय शासक था।
- बक्सर की सफलता ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को सात साल पहले प्लासी की लड़ाई और 5 साल पहले बेदारा की लड़ाई की तुलना में बंगाल प्रांत में एक शक्तिशाली ताकत के रूप में स्थापित किया मीर कासिम मुर्शिदाबाद की लड़ाई, घेरैन की लड़ाई और उधवा नाला की लड़ाई के दौरान पराजित हुआ था। मीर कासिम की मृत्यु 8 मई 1777 को दिल्ली के पास गरीबी में हुई।

प्रश्नः डूप्ले ने पहली बार भारतीय राजाओं के आपसी विवादों में हस्तक्षेप का मार्ग प्रशस्त करके विस्तृत राज्य क्षेत्रों पर राजनीतिक नियंत्रण प्राप्त किया। इस तकनीक को बाद में अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कंपनी ने निपुणता के साथ उपयोग किया। सविस्तार व्याख्या कीजिए।

(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2020)

प्रश्न की मांगः डूप्ले ने भारतीय राजाओं पर राजनीतिक नियंत्रण की जिस नई नीति को अंजाम दिया उसका उल्लेख करते हुए यह बताना है कि अंग्रेजों ने इस कैसे अपनाया।

उत्तरः डूप्ले का पूरा नाम 'जोसेफ फ्रैंक्वाय डूप्ले' था। वह फ्रांसीसी ईस्ट कम्पनी की व्यापारिक सेवा में भारत आया और बाद को 1731 ई. में चन्द्रनगर का गवर्नर बन गया। 1741 ई. में वह पाण्डिचेरी का गवर्नर-जनरल बनाया गया और 1754 ई. तक इस पद पर रहा, जहां से वह वापस बुला लिया गया।

वह योद्धा न होते हुए भी एक कुशल राजनीतिज्ञ और राजनेता था। भारतीय इतिहास में हुए कर्नाटक युद्धों में डूप्ले ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इन युद्धों के माध्यम से डूप्ले ने अपनी एक अमिट छाप भारतीय इतिहास में छोड़ी है।

डूप्ले की दूरदर्शिताः डूप्ले ने अपनी दूरदृष्टि से ये देख लिया कि 18वीं शताब्दी ई. के पंचम दशक में दक्षिण भारत के राजनीतिक संतुलन में परिवर्तन घटित हो रहा है।

तत्कालीन दक्षिण भारत की राजनीतिक व्यवस्था की कमजोरियों को उसने समझा और इस बात को भी महसूस किया कि एक छोटी सी यूरोपियन सेना लम्बी दूरी की मार कर सकने वाली तोपों, जल्दी गोली दागने वाली पैदल सिपाहियों की बन्दूकों और प्रशिक्षित सैनिकों की सहायता से दक्षिण भारत की राजनीति में निर्णायक भूमिका अदा कर सकती है। इस समय फ्राँस और इंग्लैंण्ड के बीच युद्ध चल रहा था। डूप्ले का उद्देश्य मद्रास पर कब्जा करके ब्रिटिश शक्ति को पंगु बना देना था।

इसी उद्देश्य से उसने फ्राँसीसी नौसेनापति ला बोर्दने को अपना जहाजी बेड़ा सशक्त करने के लिए धन दिया और सितम्बर, 1746 ई. में मद्रास अंग्रेजों से छीन लिया। ला बोर्दने, अंग्रेजों से घूस लेकर मद्रास वापस कर देना चाहता था। लेकिन डूप्ले ने बड़ी चतुराई से ऐसा नहीं होने दिया। बरसात आने पर ला बोर्दने के बेड़े ने जब मद्रास से हटकर आयल्स ऑफ फाँस में अड्डा जमाया, तो डूप्ले ने स्वयं जाकर मद्रास पर अधिकार किया।

डूप्ले की सफलता

डूप्ले अंग्रेजों के निकटवर्ती सेट डेविड के किले को जीतना चाहता था, लेकिन विफल हो गया। किन्तु अन्य स्थानों पर उसे उल्लेखनीय सफलताएँ मिली। कर्नाटक के नावब अनवरुद्दीन ने एक बड़ी सेना मद्रास पर कब्जा करने के लिए भेजी, लेकिन उसे दो बार फ्राँसीसी भारतीय सेना द्वारा परास्त किया गया।

- ये दोनों युद्ध कावेरी पाक और सेंट टोम में हुए। यूरोप में फ्राँस और इंग्लैंण्ड के बीच युद्ध 1748 ई. में समाप्त हो गया। दोनों देशों के बीच एक्स-ला-चैपेल की संधि हुई, जिसके अनुसार मद्रास अंग्रेजों को वापस कर दिया गया।
- इस प्रकार डूप्ले ने जो श्रम किया, वह व्यर्थ गया। कुछ भी हो, डूप्ले ने यह सिद्ध कर दिया कि यूरोपीय ढंग से प्रशिक्षित और आधुनिक शास्त्रों से लैस छोटी सी फाँसीसी भारतीय सेना इस देश की विशाल भारतीय सेनाओं की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ है।
- डूप्ले ने अपने इस अनुभव का प्रयोग करके दक्षिण भारत की रियासतों के आन्तरिक मामलों में दखल देना शुरू कर दिया। ये रियासतें बाहर से देखने पर बड़ी सशक्त जान पड़ती थीं, किन्तु सैनिक दृष्टि से बहुत कमजोर तथा आन्तरिक विग्रह से पीड़ित थीं। 1748 ई. में हैदराबाद के निजाम के मरने पर जब उत्तराधि कार का झगड़ा चला तो डूप्ले ने हस्तक्षेप किया और निजाम के पुत्र नासिरजंग के विरुद्ध पोते मुजफ्फरजंग का पक्ष लिया।
- इसी रीति से डूप्ले ने कर्नाटक में नवाब अनवरुद्दीन के विरुद्ध चंदा साहब का पक्ष लिया और उसका' समर्थन किया। आरम्भ में डूप्ले को कुछ सफलता भी मिली। 1749 ई. में आम्बूर की लड़ाई में अनवरुद्दीन मारा गया। उसका पुत्र मुहम्मद अली भागकर त्रिचनापल्ली पहुँच गया, जहाँ चन्दा साहब और फ्राँसीसियों की सेना ने उसे घेर लिया।
- डूप्ले वह पहला यूरोपीय शासक था जिसने भारतीय राजाओं के साथ सहायक संधि का प्रयोग किया।
- बाद में डूप्ले का अनुसरण करते हुए अंग्रेज गवर्नर लॉर्ड वेलेजली ने सहायक संधि का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया। इस संधि के प्रयोग से भारत में अंग्रेजी सत्ता की श्रेष्ठता स्थापित हो गयी।

निष्कर्ष

भारत में आए फ्रांसीसी अधिकारी डूप्ले एक प्रतिभाशाली व्यक्ति था जिसने भारतीय राजाओं के साथ संबंधों को आगे ले जाने में नई व्यवस्थाओं और संधियों का सहारा लिया। हालांकि वह बहुत अधिक सफल तो नहीं हो पाया परंतु अंग्रेजों ने उसकी नीति से जरूर मदद ली और भारत में अंग्रेजी सत्ता की श्रेष्ठता को स्थापित किया।

प्रश्नः ''टीपू सुल्तान मैसूर में, महत्त्वाकांक्षी भूभागीय इरादों वाला, एक शक्तिशाली केन्द्रीकृत एवं सैन्यीकृत राज्य के निर्माण का प्रयास कर रहा था।'' (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2019)

उत्तरः मैसूर के इतिहास और 18वीं शताब्दी की भारतीय राजनीति में टीपू सुल्तान ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उसने अपने पिता के द्वारा आरंभ किए गए कार्यों को पूरा करने का प्रयास किया, परंतु दुर्भाग्यवश उसमें सफल रहा। उसकी असफलता से टीपू के कार्यों का महत्त्व कम नहीं हो जाता है। अपने पिता के पश्चात उसने पुनः भारत से अंग्रेजों को निकालने का प्रयास किया। इसके लिए उसने फ्रांसीसियों और अन्य विदेशी शक्तियों से सांग-गांठ कर सहायता प्राप्त करने की कोशिश की। अगर उसके विदेशी मित्रों और भारतीय शक्तियों ने टीपू का साथ दिया होता तो संभवतः भारत से अंग्रेजी सत्ता ही समाप्त हो जाती। लेकिन, दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हो सका। टीपू इतिहास में अपनी वीरता एवं कुशल प्रशासन के लिए विख्यात है। कुछ इतिहासकारों ने उसे क्रूर एवं अत्याचारी शासक भी बताया है। एक निरंकुश शासक होते हुए भी वह अपनी प्रजा के सुख एवं समृद्धि के लिए सदैव प्रयत्नशील था। एक इतिहासकार के शब्दों में, ''गृह-शासक के रूप में पूर्व के बड़े राजाओं के साथ भी तुलना करने पर उसका स्थान अच्छा है।''

हैदर अली की मृत्यु के बाद उसका पुत्र टीपू मैसूर का शासक बना। थामस मुनरो ने उसके लिए कहा था कि ''टीपू नई रीति चलाने वाली अशान्त आत्मा है।'' टीपू ने 1787 ई. में बादशाह की उपाधि धारण की, अपने नाम के सिक्के चलाए तथा वर्षों और महीनों के हिन्दू नामों के स्थान पर अरबी नामों का प्रयोग किया। टीपू ने आधुनिक कैलेण्डर को लागू किया। सिक्का ढलाई की नई तकनीक अपनाई व नाप-तौल के आधुनिक पैमाने अपनाए।

जब फ्रांसीसी क्रान्ति के फलस्वरूप कुछ फ्रांसीसी सैनिकों ने श्रीरंगपट्टम में जैकोबिन क्लब बनाने का प्रस्ताव किया तो इसने सहर्ष स्वीकार कर लिया। वह स्वयं जैकोबिन क्लब का सदस्य बना और अपने आप को नागरिक टीपू कहने लगा। श्रीरंगपट्टम में उसने एक स्वतंत्रता का वृक्ष लगाया। टीपू ने अरब, अफगानिस्तान, फ्रांस, तुर्की, कुस्तुनतुनिया और मॉरीशस आदि जगहों पर अपने दूत भेजे। उसके दरबार में हिन्दुओं को भी उच्च पदों पर नियुक्त किया गया। पूरनिया एवं कृष्णराव इसके दो प्रमुख हिन्दू मंत्री थे। इसने अपनी सेवा में फ्रांसीसी जल सेना के एक लेफ्टिनेंट रिपो को नियुक्त किया था।

कुछ वर्ष पूर्व मिले शृंगेरी पत्रों से पता चलता है कि जब 1791 ई. में मराठा आक्रमणों से शृंगे के मन्दिर का भाग टूट गया तो शृंगेरी के मुख्य पुरोहित की प्रार्थना पर टीपू ने मंदिर की मरम्मत के लिए तथा शारदा देवी की मूर्ति की स्थापना के लिए धन दिया था। सुल्तान ने श्रीरंगपट्टम के दुर्ग में स्थित श्रीरंगनाथ नरसिंह अथवा गंगाधारेश्वर के मंदिर की पूजा में कभी हस्तक्षेप नहीं किया। यह उसकी धर्मसहिष्णुता का उदाहरण है।

सिविल सेवा मुख्य परीक्षा
(द्वितीय प्रश्न-पत्र)

विश्व इतिहास

खंड-ख

पुनर्जागरण, धर्मसुधार आंदोलन तथा प्रबोधन

प्रश्नः प्रबुद्धता के युग के बारे में क्या ''प्रबुद्ध'' था?
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2021)

उत्तरः यूरोप में 17वीं-18वीं शताब्दी में हुए क्रांतिकारी परिवर्तनों के कारण इस काल को प्रबोधन, ज्ञानोदय अथवा विवेक का युग कहा गया और इसका आधार पुनर्जागरण, धर्मसुधार आंदोलन व वाणिज्यिक क्रांति ने तैयार कर दिया था। पुनर्जागरण काल में विकसित हुई वैज्ञानिक चेतना ने, तर्क और अन्वेषण की प्रवृत्ति ने 18वीं शताब्दी में परिपक्वता प्राप्त कर ली। वैज्ञानिक चिंतन की इस परिपक्व अवस्था को 'प्रबोधन' के नाम से जाना जाता है।

प्रबोधनकालीन चिंतकों ने इस बात पर बल दिया कि इस भौतिक दुनिया और प्रकृति में होने वाली घटनाओं के पीछे किसी न किसी व्यवस्थित अपरिवर्तनशील और प्राकृतिक नियम का हाथ है। फ्रांसिस बेकन ने बताया कि विश्वास मजबूत करने के तीन साधन हैं-अनुभव, तर्क और प्रमाण; और इनमें सबसे अधिक शक्तिशाली प्रमाण है, क्योंकि तर्क/अनुभव पर आधारित विश्वास स्थिर नहीं रहता।

ज्ञान को विज्ञान के साथ जोड़नाः प्रबोधन के चिंतकों ने ज्ञान को प्राकृतिक विज्ञानों के साथ जोड़ दिया। पर्यववेक्षण, प्रयोग और आलोचनात्मक छानबीन की व्यवस्थित पद्धति का प्रयोग ज्ञानोदय के चिंतकों की नजर में सत्य तक पहुँचने का सक्षम आधार थी। उनके मुताबिक ज्ञान को प्रयोग एवं परीक्षा योग्य होना चाहिए। इसके पास ऐसे प्रमाण होना चाहिए जो बोधगम्य हो और मानव मस्तिष्क की पहुँच में हो। ज्ञान की इसी धारणा के आधार पर प्रबोधन ने पराभौतिक अनुमान और ज्ञान में विरोध बताया।

कार्य-कारण संबंध का अध्ययनः कार्य-कारण संबंध का अध्ययन विज्ञान संबंधी प्रबोधन चिन्तन का केन्द्रीय तत्व था। चिंतकों ने ऐसी पूर्ववर्ती घटना को चिन्हित करने की कोशिश की जिसका होना किसी परिघटना के पैदा होने के लिए अनिवार्य है और पूर्ववर्ती घटना के न होने के लिए अनिवार्य है और पूर्ववर्ती घटना के न होने से परवर्ती घटना नहीं पैदा होती। वस्तुतः कारणों की खोज प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण पर मनुष्य का नियंत्रण बढ़ाने के साधन के रूप में की जाने लगी।

मानवतावादः प्रबोधन युग के चिंतकों ने मानव के खुशी और भलाई पर बल दिया। उसके अनुसार मनुष्य स्वभाव से ही विवेकशील और अच्छा है किन्तु स्वार्थी धर्माधिकारियों और उनके बनाए गए नियमों ने मनुष्य को भ्रष्ट कर दिया यदि मनुष्य अपने को इन स्वार्थी धर्माधिकारियों के चुंगल से मुक्त कर सके तो एक आदर्श समाज की स्थापना की जा सकती है। प्रबोधन के चिंतकों का मानना था कि दुनिया मशीन की तरह है जिनका नियंत्रण व संचालन कुछ खास नियमों के तहत् होता है। फलस्वरूप उन्हें आशा बनी कि इस अंतर्निहित नियमों की खोज वे ब्रह्माण्ड के रहस्य को समझ लेंगे और फिर उस पर काबू पा लेंगे। इसका उद्देश्य व्यक्तियों को अपने वातावरण पर नियंत्रण स्थापित करने में समर्थ बना देना था ताकि वे प्राकृतिक शक्तियों की विध्वंसात्मक शक्तियों से अपनी रक्षा कर सके साथ ही साथ प्रकृति की ऊर्जा का मानव जाति के फायदे के लिए इस्तेमाल कर सके। न्यूटन ने प्रकाश के मौलिक रहस्यों का पता लगाया और प्रकाश विज्ञान की स्थापना की। बेंजामिन फ्रैंकलिन सहित कई लोगों ने विद्युत की खोज में अपना योगदान दिया।

समानता एवं स्वतंत्रता पर बलः ज्ञानोदय के चिंतक स्वतंत्रता व स्वच्छंदता के हिमायती थे। दिदरो ने व्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में तर्क देते हुए कहा-"प्रकृति ने किसी को भी दूसरों को आदेश देने का अधिकार नहीं दिया है, स्वतंत्रता दैवी दान है।" प्रबोधन के चिंतकों ने कहा कि सब मनुष्य एक समान उत्पन्न होते हैं उनमें जो विषमता पाई जाती है इसका कारण केवल यह है कि सबको शिक्षा एवं उन्नति का अवसर समान नहीं मिलता।

प्रकृति पर बलः प्रबोधन ने प्रकृति के महत्व को प्रतिपादित किया। चिंतकों के अनुसार प्रकृति अपने सरल रूप में सौन्दर्य से परिपूर्ण है। प्रकृति की ओर लौट चलना एक प्रकार से स्वतंत्रता की ओर लौटने के बराबर है।

प्रश्नः प्रबोधन के सिद्धांत कुछ प्रकार से वैज्ञानिक क्रांति की खोजों तथा सिद्धान्तों का विस्तार थे।
(सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2020)

प्रश्न की मांगः प्रबोधन के सिद्धांतों का विश्लेषण नवीनतम वैज्ञानिक सोच और सिद्धांतों की विचार शैली का उल्लेख करते हुए करना है।

उत्तर: सत्रहवीं शताब्दी के पांचवें दशक से अठहारवी शताब्दी के आखिर तक की अवधि में पश्चिमी यूरोप के सांस्कृतिक एवं बौद्धिक वर्ग ने परम्परा से हटकर तर्क, विश्लेषण तथा वैयक्तिक स्वातंत्र्य पर जोर दिया, जिसे प्रबोधन काल कहा जाता है। प्रबोधन के सिद्धांतों से कैथोलिक चर्च एवं समाज में गहरी पैठ बना चुकी अन्य संस्थाओं को चुनौती दी गई।

चिंतकों का मत: प्रबोधनकालीन चिंतकों ने इस बात पर बल दिया कि इस भौतिक दुनिया और प्रकृति में होने वाली घटनाओं के पीछे किसी न किसी व्यवस्थित अपरिवर्तनशील और प्राकृतिक नियम का हाथ है। फ्रांसिस बेकन के अनुसार विश्वास मजबूत करने के तीन साधन हैं-अनुभव, तर्क और प्रमाण; और इनमें सबसे अधिक शक्तिशाली प्रमाण है, क्योंकि तर्क/अनुभव पर आधारित विश्वास स्थिर नहीं रहता।

वैज्ञानिक सोच: प्रबोधन के चिंतकों ने ज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान के साथ जोड़ दिया। पर्यववेक्षण, प्रयोग और आलोचनात्मक छानबीन की व्यवस्थित पद्धति का प्रयोग ज्ञानोदय के चिंतकों की नजर में सत्य तक पहुँचने का सक्षम आधार थी। उनके मुताबिक ज्ञान को प्रयोग एवं परीक्षा योग्य होना चाहिए। इसके पास ऐसे प्रमाण होना चाहिए जो बोध गम्य हो और मानव मस्तिष्क की पहुँच में हो। ज्ञान की इसी धारणा के आधार पर प्रबोधन ने पराभौतिक अनुमान और ज्ञान में विरोध बताया।

प्रयोग एवं परीक्षण पर बल

मध्ययुग में ईसाईमत का प्रभाव इसलिए माना जाता था कि ईश्वर द्वारा निर्मित इस दुनिया को मनुष्य नहीं जान सकता। इस परिभाषा के मुताबिक यह दुनिया मानवीय बुद्धि के लिए अगम है। मनुष्य एवं बह्माण्ड के बारे में सत्य का केवल "उद्घाटन" हो सकता है इसलिए उसे केवल पवित्र पुस्तकों के जरिए जाना जा सकता है। "जहाँ ज्ञान का प्रकाश आलोकित नहीं होता वहाँ विश्वास की ज्योति से रास्ता सूझता है।" यही विश्वास मध्य युग की विशेषता थी। ज्ञानोदय ने इस नजरिए को खारिज कर दिया और दावा किया कि जिन चीजों को बुद्धि के प्रयोग व व्यवस्थित पर्यवेक्षण से नहीं जाना जा सकता, वे मायावी हैं। मनुष्य ब्रह्माण्ड के रहस्यों को पूरी तरह समझ सकता है। प्रकृति के बारे में हमें पवित्र पुस्तकों के माध्यम से नहीं बल्कि प्रयोगों एवं परीक्षाओं के माध्यम से बात करनी चाहिए।

कार्य-कारण संबंध का अध्ययन

कार्य-कारण संबंध का अध्ययन विज्ञान संबंधी प्रबोधन चिन्तन का केन्द्रीय तत्व था। चिंतकों ने ऐसी पूर्ववर्ती घटना को चिन्हित करने की कोशिश की जिसका होना किसी परिघटना के पैदा होने के लिए अनिवार्य है और पूर्ववर्ती घटना के न होने के लिए अनिवार्य है और पूर्ववर्ती घटना के न होने से परवर्ती घटना नहीं पैदा होती। वस्तुत: कारणों की खोज प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण पर मनुष्य का नियंत्रण बढ़ाने के साधन के रूप में की जाने लगी।

निष्कर्ष

प्रबोधन का आरंभ भले ही यूरोप में हुआ लेकिन इसका प्रभाव धीरे धीरे बढ़ता गया और पूरी दुनिया में फैला। निरंकुश राजतंत्रों और दकियनूसी परंपराओं पर कुठाराघात होने लगा एवं लोकप्रिय सरकारों की स्थापना होने लगीं और आधुनिक विश्व का निर्माण हुआ।

प्रश्न: पूर्व-मार्क्सवादी समाजवाद की प्रकृति की आप कैसे व्याख्या करेंगे? (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा 2019)

उत्तर: 1920-21 में देश की सामाजिक, आर्थिक स्थिति और कृषकों के विरोध को ध्यान में रखकर, यथार्थवादी लेनिन अपनी नीति में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन करने का निश्चय किया।

उसने कहा कि ऐसी दरिद्रता एवं विनाश तथा श्रमिकों और कृषकों की उत्पादन-शक्ति के ह्रास अवस्था में पहुंच गए हैं कि हमें उत्पादन को बढ़ाने के लिए सभी बातों (सिद्धांतों) एक ओर रख देना चाहिए। इसी आधार पर उसने नई आर्थिक नीति की रूपरेखा प्रस्तुत की, जिसे दलीय सम्मेलन ने स्वीकार कर लिया गया। नई आर्थिक नीति के अनुसार कृषि, उद्योग एवं व्यापार के सम्बन्ध में साम्यवादी व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन करके पूंजीवादी व्यवस्था की ओर लौटने का निश्चय किया गया। नयी आर्थिक नीति लेनिन की दूरदर्शिता का परिचायक थी।

साम्यवादी व्यवस्था में किसानों से उनकी आवश्यकता की पूर्ति से बचे हुए अनाजों को सरकार ले लेती थी। यह प्रथा बंद कर दी गयी। उनसे सिर्फ कर लिया जाने लगा तथा बाजार में बचे हुए अनाज को बेचने की अनुमति मिल गयी। औद्योगिक क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ। बड़े-बड़े कारखानों पर तो राज्य का ही नियंत्रण रहा, लेकिन छोटे-छोटे कारखानों को उत्पादन और वितरण के मामले में स्वतंत्र कर दिया गया। विदेशी व्यापार पर सरकार का एकाधिकार पूर्ववत् बना रहा, किन्तु सरकारी नियंत्रण के अंतर्गत निजी परचून व्यापार (Retail trade) की अनुमति दे दी गई। विदेशी पूंजी को आकर्षित करने के लिए सुविधाएं दी गयीं।

मुद्रा का फिर से प्रचलन किया गया। नयी आर्थिक नीति, युद्ध-साम्यवाद की नीति से भिन्न थी, क्योंकि उसके अंतर्गत कुछ अंशों में पूंजीवादी व्यवस्था को स्वीकार किया गया था।

लेकिन, लेनिन इसे पूंजीवाद के समक्ष बोल्शेविक सरकार का आत्मसमर्पण नहीं मानता था। उसकी दृष्टि से, नई आर्थिक नीति, बोल्शेविक राज्य की शक्ति और राजनीति नमनीयता का लक्षणमात्र थी। लेनिन ने कहा था, ''दो कदम आगे बढ़ने के लिए एक कदम पीछे हटना चाहिए।'' उसका विचार था कि जब आर्थिक व्यवस्था सुधर जाये तो सरकार पुन: साम्यवादी व्यवस्था कायम कर लेगी और ऐसा हुआ भी। नयी आर्थिक नीति का उद्देश्य, श्रमिकवर्ग और कृषकों के आर्थिक सहयोग को सुदृढ़ बनाना, नगरों और ग्रामों के समस्त श्रमजीवी वर्ग को देश की अर्थव्यवस्था का विकास करने के लिए प्रोत्साहित करना तथा अर्थव्यवस्था के प्रमुख सूत्रों को शासन के अधिकार में रखते हुए आंशिक रूप से पूंजीवादी व्यवस्था को कार्य करने की अनुमति देना था।

प्रश्न: "कार्ल मार्क्स की रचनाओं के साथ समाजवाद वैज्ञानिक समाजवाद के रूप में परिवर्तित हो गया था।" (सिविल सेवा मुख्य परीक्षा, 2018)

उत्तर: आरंभिक समाजवादियों को स्वप्नदर्शी समाजवादी (यूरोपियन समाजवादी) इसलिए कहा गया क्योंकि उन्होंने एक आदर्श समाज की स्थापना की बात की, लेकिन इसकी स्थापन कैसे हो इसकी चर्चा नहीं की।

दूसरी बात इन सामाजवादी विचाराकों ने पूंजीपतियों की सहायता के तहत् श्रमिकों एवं मजदूरों की स्थिति में सुधार की बात की किन्तु मार्क्स ओर एंजेल्स के चिंतन ने समाजवादी विचार को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया।